लोकसभा चुनावों में भाजपा की जीत : किस लहर पर सवार थे नरेंद्र मोदी

मनोज कुमार झा

इस बार लोकसभा चुनावों में नरेंद्र मोदी ने तमाम विरोधियों की उम्मीदों पर तुषारापात करते हुए भारतीय जनता पार्टी की अभूतपूर्व जीत दर्ज कराई। संभवत: कांग्रेस की ऐसी दुर्गति और भाजपा की ऐसी जीत की उम्मीद किसी को नहीं थी। माना जा रहा था कि पिछले पांच वर्षों में नरेंद्र मोदी-अमित शाह के नेतृत्व में भाजपा ने जैसी नीतियां अपनाई हैं, उसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ेगा और राहुल गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस एक गठबंधन का नेतृत्व करते हुए सत्ता में आ सकती है। लेकिन जब चुनाव परिणाम आने शुरू हुए तो क्या विरोधी, क्या समर्थक, सभी हतप्रभ रह गए। न भाजपा की पहले कभी ऐसी विजय हुई थी, न ही कांग्रेस की कभी ऐसी हार। अमेठी में गांधी- नेहरू परिवार की परंपरागत सीट भी नहीं बच सकी। राहुल गांधी को स्मृति ईरानी के हाथों मात खानी पड़ी। इसके साथ ही, कांग्रेस के कई दिग्गज नेताओं की बुरी तरह हार हुई। पश्चिम बंगाल में जहां भाजपा का कोई खास जनाधार नहीं था, वहां भी उसे आशातीत सफलता मिली।

देश में नरेंद्र मोदी और भाजपा की अभूतपूर्व लहर थी, जिसे समझ पाने में विरोधी तो नाकामयाब हुए ही, स्वयं भाजपा के नेता भी यह नहीं समझ पाए थे। इस चुनाव में कांग्रेस के साथ ही राजद, समाजवादी पार्टी, मायावती की बहुजन समाज पार्टी, ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस और आंध्र प्रदेश की तेलुगु देशम पार्टी के चंद्रबाबू नायडू कोई नामलेवा नहीं रहा। उल्लेखनीय है कि चंद्रबाबू नायडू ने भाजपा विरोधी गठबंधन के नेता के रूप में खुद को पेश करने की कोशिश की थी। इस चुनाव में वामपंथी दलों का पत्ता पूरी तरह से साफ हो गया। जिस कन्हैया को संपूर्ण वाम का चेहरा घोषित कर उसके गृह क्षेत्र बेगूसराय से उतारा गया था और जिसके प्रचार में बेशुमार धन खर्च करने के साथ

लेखक, संस्कृतिकर्मी, फिल्म स्टार तक सामने आए थे और जिसकी जीत तय मानी जा रही थी, उसे भाजपा के कट्टर हिंदूवादी नेता गिरिराज सिंह ने बुरी तरह हराया।

पूरे चुनाव के दौरान नरेंद्र मोदी और उनके सहयोगियों ने जिस तरह सभी मर्यादाओं को भंग करते हुए चुनाव प्रचार किया, उसका कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ा। जनता ने भाजपा को हाथोहाथ लिया। अब ऐसा लगता है कि तमाम जनविरोधी नीतियां अपनाने के बावजूद भाजपा और नरेंद्र मोदी का कोई विकल्प नहीं रह गया है। कम से कम निकट भविष्य में नहीं लगता कोई राजनीतिक पार्टी या पार्टियों का गठबंधन इस हाल में आ सकेगा कि इन्हें चुनौती दे सके।

सवाल है कि नोटबंदी, जीएसटी जैसे आत्मघाती जनविरोधी कदम उठाने वाली और महंगाई से लेकर रोजगार के मुद्दे पर पर पूरी तरह विफल रहने वाली नरेंद्र मोदी की सरकार को ऐसी सफलता कैसे मिली। अलग-अलग विश्लेषक इसके अलग-अलग कारण बताते हैं। भाजपा समर्थक विश्लेषकों और टिप्पणीकारों का कहना है कि वास्तव में नरेंद्र मोदी सरकार की नीतियां आम जनता के पक्ष में थीं, जिसका उन्हें फायदा मिला। पर सवाल है कि जनहित के किसी सवाल पर नरेंद्र मोदी सरकार ने कोई ऐसा कदम नहीं उठाया, जिससे जनता को राहत मिली हो। आम लोगों का यही कहना था कि नरेंद्र मोदी की सरकार की नीतियों से लोगों को भारी नुकसान पहुंचा है। पर जब बात ऐसी थी तो इतनी बड़ी चुनावी सफलता उन्हें कैसे मिली।

यह एक ऐसा सवाल है, जिसका जवाब तलाश कर पाना आसान नहीं है। नरेंद्र मोदी के बहुतेरे आलोचक ईवीएम को उनकी सफलता का राज़ मानते हैं। उनका कहना है कि ईवीएम में भारी उलटफेर कर मोदी चुनाव जीतने में कामयाब रहे। पर यह बात गले उतरने वाली नहीं। ईवीएम में इतने बड़े पैमाने पर उलटफेर कर पाना तकनीकी तौर पर संभव नही है। जाहिर है, जनता ने मोदी और उनकी पार्टी के उम्मीदवारों का जमकर समर्थन किया है।

फर्जी मुद्दों पर मिला जनसमर्थन

इस बात में कोई दो राय नहीं कि नरेंद्र मोदी और भाजपा के रणनीतिकारों ने जनता के सामने फर्जी मुद्दे रखे और उनका हल करने में खुद को कामयाब बताया। पुलवामा, सर्जिकल स्ट्राइक, पाकिस्तान आदि ऐसे मुद्दे रहे जिनसे मोदी-अमित शाह जनता को बरगला पाने में कामयाब रहे। इन्होंने युवाओं को यह भरोसा दिलाया कि रोजगार या महंगाई उनके लिए मुद्दा नहीं है। उनके लिए मुद्दा पाकिस्तान और मुसलमान है, जिसका हल उन्होंने कर दिया है। पाकिस्तान अब भारत से थरथर कांपता है और अमेरिका जैसे सर्वशक्तिमान देश के पूर्व राष्ट्रपति बराक ओबामा को मोदी तू-तड़ाक कर बात करते हैं। यह उनका जलवा है। ऐसा व्यक्ति दूसरा नहीं जो देश को नेतृतव दे सके। युवा वर्ग पूरी तरह उनके जाल में फंस गया। यही कारण है कि जब मोदी ने खुद के 'चौकीदार' होने की घोषणा की तो लाखों की संख्या में युवा सोशल मीडिया पर 'मैं भी चौकीदार' का तमगा लगाए सामने आए। वहीं, राहुल गांधी का 'चौकीदार चोर है' नारा सफल होता दिखा तो जरूर, पर चुनाव परिणामों पर कोई असर नहीं डाल सका।

मीडिया का एकतरफा प्रचार

इसमें दो राय नहीं कि भाजपा ने चुनावों में जम कर पैसा खर्च किया और इसका एक बड़ा हिस्सा मीडिया और सोशल मीडिया पर लगाया। मीडिया के एक बड़े हिस्से को नरेंद्र मोदी-अमित शाह पालतू बनाने में कामयाब रहे। इसकी वजह यह है कि जिन पूंजीपतियों के स्वामित्व वाले ये मीडिया ग्रुप थे, उन्हें नरेंद्र मोदी की सरकार में बहुत फायदा मिला था। इसलिए उन्होंने नरेंद्र मोदी और भाजपा का प्रचार करना अपना धर्म मान लिया। यह उनकी स्वामी-भक्ति थी। वहीं, कांग्रेस और दूसरे दलों का इन्होंने नकारात्मक प्रचार किया। सोशल मीडिया पर भाजपा के ट्रोलर दिन-रात सक्रिय थे और इन्होंने भाजपा के पक्ष में माहौल बनाने में बड़ी भूमिका निभाई, जबकि कांग्रेस और दूसरे दलों की सोशल मीडिया पर उपस्थिति इनकी तुलना में नहीं के बराबर थी और आक्रामक प्रचार तो सिरे से नहीं था। राहुल शराफत के पुतले बन कर सामने आ रहे थे और अपने कार्यकर्ताओं को भी उन्होंने शराफत से ही पेश आने का संदेश दिया, जबकि भाजपाइयों ने गुंडागर्दी की हर हद पार कर दी।

हिंदुत्व का नारा

नरेंद्र मोदी और उनके सिपहसालारों ने खुल कर हिंदुत्व का नारा दिया और प्रच्छन्न रूप में मुसलमानों के खिलाफ विष-वमन किया। भोपाल से आतंकवाद के आरोपों से घिरी प्रज्ञा ठाकुर को टिकट देना और उसके द्वारा गोडसे को महिमामंडित किया जाना ऐसे ही कदम थे। इसके पहले से ही नरेंद्र मोदी और उनके गैंग के लोग हिंदुत्व के नाम पर लोगों को भड़का रहे थे। हिंदू बहुत राष्ट्र में, जब सारे ज़मीनी मुद्दे गौण कर दिए गए, हिंदूवाद की लहर पर सवारी गांठना आसान हो गया। हिंदूवाद के नाम पर भाजपा को अमीरों के साथ गरीबों के वोट भी मिले।

नरेंद्र मोदी और उनका गैंग जनता को यह मनोवैज्ञानिक रूप से यह भरोसा दिलाने में कामयाब रहा कि हिंदू धर्म खतरे में है, पर यह नहीं बतलाया कि किससे और जनता मान बैठी कि वाकई धर्म खतरे में है जिसे नरेंद्र मोदी-अमित शाह ही बचा सकते हैं। चुनाव के अंतिम चरण के ठीक पहले नरेंद्र मोदी केदारनाथ की कृत्रिम गुफा में जो नौटंकी करने गए, वह हिंदुत्व के नाम पर चुनाव-प्रचार का चरम था। जनता इससे बहुत प्रभावित हुई। मीडिया, चुनाव आयोग, न्यायालय, पूंजीपतियों का सहयोग इन्हें हासिल था ही, अन्य सरकारी संसाधन भी सहज उपलब्ध थे। दिग्विजय सिंह को छोड़ कर कांग्रेस के शायद ही किसी दूसरे नेता ने हिंदूवाद का सहारा लेने की कोशिश की, पर दिग्विजय की जो बुरी हार हुई, उससे उनके राजनीतिक करियर का ही अंत हो गया। राहुल गांधी ने इस चुनाव में सॉफ्ट हिंदुत्व की अपनी पहले वाली नीति नहीं अपना कर सराहनीय काम किया है। आखिर, राजनीति में चुनावी जीत ही सब कुछ नहीं है।

कुछ दिनों बाद ईद है, लेकिन मैं बहुत डरी हुई हूं

हम विभाजन के समय ही अपने वतन को छोड़कर पाकिस्तान चले जाते तो आज न हिंदुओं को हमारे नाम से डराया जाता, न हमें अपने वतन हिंदुस्तान में डर लगता।

जनज्वार। मेरा नाम रजिया (परिवर्तित नाम) है और मैं एक मुस्लिम महिला हूँ। मैं दिल्ली में महिला अधिकारों के लिए काम करने वाली एक संस्था में काउंसलर का काम करती हूं। मैं उन लड़कियों-औरतों को जीवन की मुश्किल घड़ी में संघर्ष करने की कानूनी सलाह देती हूं जो परिवार, पति, पड़ोसियों और सहयोगियों से प्रताड़ित होती रहती हैं। उन्हें यह भी बताती हूं कि सबसे जरूरी व्यक्तिगत तौर पर वह सक्षम होना है, इससे आदमी बेचारा नहीं बनता और उसमें अपने अधिकारों की रक्षा करने की इच्छा शक्ति बची रहती है।

पर इन दिनों खुद बहुत कमजोर महसूस कर रही हूं। हर वक्त ऐसा लगता है कि कहीं कोई कुछ बोल न दे, सीधे पर टोक न दे कि चुप रहो मुसलमान हो, तुम लोग ऐसे ही होते हो, मोदी जी आए तो मुस्लिम औरतों को अधिकार मिला, मदरसे की पढ़ी हो तुम क्या जाना भारत की भावना, अब मोदी जी के कामों पर बहुल लेक्चर दे रही हो, औकात में रहो, कटुओं को औकात में ला दिया मोदी ने, आदि—इत्यादि।

यह आशंका मुझे इसलिए है कि अक्सर ही सार्वजनिक स्थानों पर, कभी मुस्लिमों मर्दों-औरतों की उपस्थिति में तो कभी अनुपस्थिति, ऐसी बातें मैं सुनती रहती हूं। एक दिन मेट्रो पर सुना सारे अपराधी मुसलमान ही क्यों होते हैं? इससे पहले तक आतंकवादी सुनती थी। मैं पूरी कोशिश करती हूं कि मुसलमान जैसी न दिखूं, पर जब कुछ सुनती हूं तो डर जाती हूं। ऐसा लगता है जैसे चोरी पकड़ी गयी हो या फिर ग्लानि होती है कि क्यों छुपाती फिरती हूं अपनी पहचान।

हालांकि मेरी यह मानसिक स्थिति प्रधानमंत्री मोदी जी के आने के बाद नहीं हुई है। पिछले पांच सालों में भी नहीं हुई है, बल्कि थोड़ा-बहुत डर पहले भी था। पर पांच साल पहले तक लगता था कि किसी अनहोनी की हालत में, सांप्रदायिक-धार्मिक गुंडई की स्थितियों में फंसने पर पुलिस, समाज और पड़ोसी तो साथ खड़ा हो जाएगा, पर पांच सालों में स्थितियां बदली हैं, अब नहीं लगता कोई खड़ा होगा। रपटों में पढ़ती हूं, गौ रक्षा के नाम पर दिया गया, पीट दिया गया, दाढ़ी काट दी और मुकदमा भी उसी के खिलाफ लिखा गया तो सिहर जाती हूं।

तीन दिन पहले मैंने खबरों में आए एक वीडियो को देख रही थी जिसमें मध्य प्रदेश में कुछ गौ रक्षक गौ मांस रखने के शक के आधार पर कुछ मुस्लिम लोगों को बेहरमी से पीट रहे हैं। उनके साथ एक मुस्लिम महिला को भी पैर की जूती से पीट रहे हैं। कल ही हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने सबका

साथ सबका विकास का नारा दोहराया था। मुझे पूरा भरोसा है कि वे ऐसे कृत्य करने वाले को प्रज्ञा ठाकुर की तरह कभी मुआफ नही करेंगे और एमपी में कांग्रेस की सरकार है कानून व्यवस्था की जिम्मदारी उसकी है। क्या कांग्रेस के सीएम में इतना साहस नहीं बचा है कि वे इन गौ रक्षकों के खिलाफ कार्यवाई कर सजा दें।

मैं बहुत उलझी रहती हूं इन दिनों। मैं कभी इतना राजनीति के बारे में नहीं सोचती थी जितना आजकल सोचती रहती हूं। कोई खबर आती है तो ऐसा लगता है कि फिर कोई मुसलमान किसी नाम पर बलि का बकरा बना। मैंने मोबाइल में 'न्यूज एलर्ट' के आप्शन हटा डाले।

मुझे नहीं पता कि मैं अपनी बातों को ठीक से लिख पा रही हूं या नहीं। पर मुझे इतना जरूर कहना है कि गांधी ने विभाजन के वक्त क्यों रोक लिया हमें? क्या इसलिए कि हिन्दुस्तान की सरजमीं पर हम मुसलमान हमेशा-हमेशा के लिए दूसरे दर्जे के नागरिक बने रहें और हर वक्त हमें लोग संदेह की नजरों से देखें और हम अपनी देशभक्ति का प्रमाण देते रहें। कौन जवाब देगा कि वो लोग क्यों बढ़ रहे हैं हमारे देश में जो गिड़गिड़ाते हुए मुसलमानों को देखना चाहते हैं?

मैं तो किसी के दुख की बात सुन लूं तो रो पड़ती हूं, कोई मेरे सामने गिड़गिड़ाए तो गड़ ही जाउं? बड़ी बात ये कि लोग हमसे नफरत किसी दुख में नहीं खुशी में कर रहे हैं, ? हम मुसलमानों को दुबक के रहने को अपना विजय मान रहे हैं।

हम सारे मुसलमान विभाजन के वक्त ही पाकिस्तान चले गए होते तो आज हमारे देश के बहुसंख्यक समाज हिंदुओं को हमारे नाम से डराया नहीं जाता। न ही हमें हिंदुस्तान में रहते हर पल डर के साये में रहना पड़ता कि पता नहीं कब हमारे पर गौ मांस रखने या खाने का शक करके हमें मौत के घाट उतार दिया जाए।

अभी ईद में वक्त है और रमजान का महीना चल रहा है। मेरे मां, माटी और मानुष वाले प्रदेश बंगाल में ईद पर अन्य जानवरों के अलावा गौ वंश की भी बलि दी जाती है। ये सालों से चला आ रहा है, लेकिन इस बार मुझे अजीब सा डर सता रहा है। ये डर 23 मई को बंगाल में आये लोकसभा के दौरान हुई हिंसा और चुनाव के नतीजों के बाद बीजेपी के जीतने के बाद एक भय में बदल गया है कि इस बार हम ईद शांतिपूर्ण ढंग से मना पाएंगे या नहीं।

बंगाल में करीब 27 प्रतिशत मुस्लिम आबादी है। क्या इतने बड़े मुल्क के इतने बड़े प्रदेश की इतनी बढ़ी आबादी के पास उसके त्योहार उसके अनुसार मनाने का अधिकार भी नहीं रह जायेगा। हमारे संविधान में सबको बराबरी का हक दिया है। पता नहीं इस बार मेरे परिवार और मेरा परिवार ईद का जश्न किस तरह मनाएगा। यह सब सोचकर मुझे एक अजीब सा डर सता रहा है कि हम ईद मना पाएंगे या नहीं, कोई अशांति तो नहीं होगी।

मैं बहुत डरी हुई हूं। रोज सोचती हूं कि मैं अपने परिवार को लेकर दूसरे देश में बस जाऊं, जहाँ मुझे इस बात का डर न हो कि मैंने गौ मांस खा लिया तो मुझे मार दिया जाएगा। लेकिन मुझे पता है मेरा परिवार इस देश को छोड़कर नहीं जाएगा। हम सब इस मुल्क को अपना मानते हैं। जब सुनती हूं कि पाकिस्तान चले जाओ तो सोचती हूं मुंह तोड़ दूं। पर कर क्या सकती हूं।

मैंने ये बातें दुख और भय के बीच कहीं हैं। अगर आप संदेश ये मोदी जी को पहुंचा सकते हैं तो कह दें, हमें पाकिस्तानी सुनना या पाकिस्तान जाने की बात सुनने में बहुत बुरी लगती है, बहुत ही इंसल्टिंग। किसी ने अगर मुझे बोला तो मुंह तोड़ दूंगी। हमारा परिवार इस मिट्टी को अपना मानता है और मरने के बाद इसी मिट्टी में दफन होगा, जहां जिसको लिखना है लिखकर लिख ले, पर हमारी बेइज्जती न करे। हमें इस मुल्क से बहुत प्यार है तिरंगे से भी।

क्या हैं इस सादगी के माइने

धीरेश सैनी

प्रताप चन्द्र सारंगी बड़े सादे हैं। उनके कपड़े देखिए, उनकी दाढ़ी देखिए। उनकी सादगी देखिए, उन्हें उड़ीसा का मोदी यूँ ही नहीं कहा जाता है।

ये सब टीवी चैनलों से निकल रहे वाक्य हैं जो फेसबुक पर भी तैर रहे हैं। तो पहले यह तय कर लीजिए कि सादगी का पैमाना किस के कपड़ों को बनाएं, सारंगी के या मोदी के।

चलिए, यह बताइए कि राजनीति में और मौजूदा राजनीति में, मौजूदा राजनीति के सबसे ज़्यादा कामयाब और लोकप्रिय लोगों के लिहाज से सादगी क्या वाकई बड़ा मूल्य है।

जाने दीजिए, यह बताइए कि राजनीति में जो नीति शब्द है, उसका क्या मूल्य है। यह नहीं कहिए कि कोई मूल्य नहीं। जो क़ामयाब हो रही है, वह भी आख़िर एक नीति है। सोची-समझी नीति। यह बताइए कि साधारण कपड़े पहनकर सम्प्रदायिकता की नीति को समर्पित होकर खाद-पानी दिया जाता रहे तो इसे क्या कहा जाएगा? क्या साधारण कपड़ों पर इस राजनीति के दाग़ अच्छे कहलाएंगे। पहले तो यही बताइए कि सम्प्रदायिकता की राजनीति को आप दाग़ मानते भी हैं या नहीं।

कम पैसों का चुनाव! सारंगी जिस पार्टी में हैं, उसके पास जितना अकूत धन है और जिस तरह उसने चुनाव में खर्च किया है, कोई एंकर ही कह सकता है कि उस पार्टी ने सादगी से और सीमित संसाधनों से जैसे-तैसे चुनाव लड़ा। एंकर यह कहे, इस पर जो खर्च आता है, उस के बारे में कुछ बताइए। यूँ भी चुनाव, प्रत्याशी से पहले भाजपा का मैनेजमेंट और संघ का काडर लड़ रहा था।

नेहरू को जाने दीजिए। कहिएगा कि चांदी का चम्मच मुंह में लेकर पैदा हुए थे। यह तो सही है। पर बताइएगा कि क्या आप यह जानते हैं कि बाद में उनका जीवन क्या था और उनकी सम्पत्ति किस-किस काम आ रही थी और उनका अपना खर्च कितना था। जाने दीजिए रसने के लिए बहुत गप्प हैं कि उनके कपड़े पेरिस से धुलकर आते थे। कि विलायत में यूनिवर्सिटी के हर दरवाजे पर उनके लिए गाड़ी खड़ी रहा करती थी। अब तो वॉट्सएप पर नेहरू को लेकर झूठ के घिनौने कीर्तिमान गढ़े जा रहे हैं।

डॉ. आम्बेडकर के कोट-पैंट को लेकर भी कम वॉट्सएप नहीं घूम रहे हैं और गांधी की लँगोटी को लेकर भी। सवाल यह है कि लँगोटी और कोट-पैंट के अलावा क्या यह भी देखने की चीज़ है कि लँगोटी या कोट-पैंट या शेरवानी पहनकर राजनीति क्या की जा रही है। कि कन्सर्न क्या हैं। राजनीति समाज को जोड़ने की है या तोड़ने की? हाशिये के दलित-वंचित, अल्पसंख्यक, स्त्रियां, वो अंतिम व्यक्ति क्या वाकई आपके एजेंडे में शामिल है या फिर कॉरपोरेट के टूल बनकर साइन कर रहे हैं।

मनमोहन सिंह बतौर प्रधानमंत्री उलझी दाढ़ी वाले तो नहीं थे। कोट-पैंट ही पहनते थे। अपेक्षाकृत सादगी का ही जीवन था पर काम कॉरपोरेट का ही करते थे। बताइए, क्या कहिएगा?

वैसे महाराष्ट्र में एक टोपी, कुर्ते-पाजामे वाले, उस शख्स की छवि भी याद होगी जो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ नंगे पांव खड़ा हुआ था। उसकी सादगी को और उसकी राजनीति को याद कीजिए।

फिदा होइए पर ज़रा कपड़ों के साथ राजनीति भी देखिए। एंकर्स और काडर की ही तरह बिहेव करना है तो बात अलग है।